नं० २९०

मनुष्य जन्मा

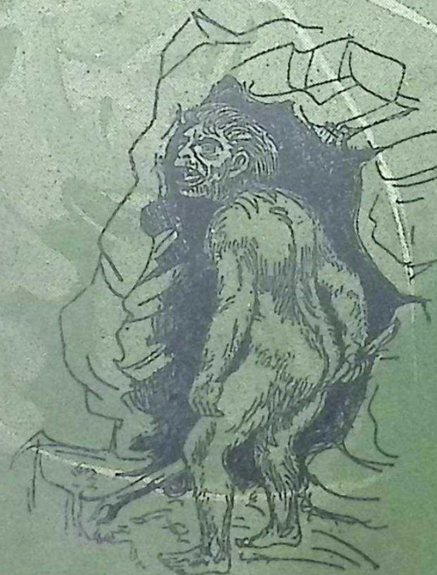

सस्ता साहित्य मण्डल

नं०२१०

मानव की कहानी

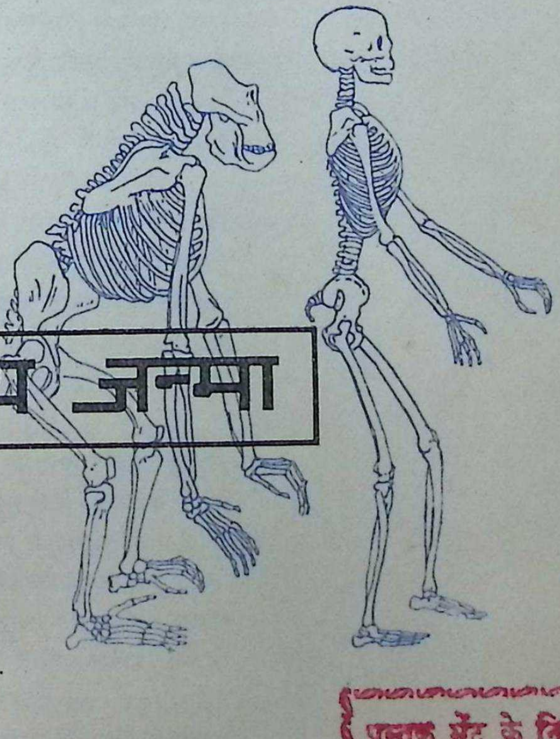

मनुष्य जन्मा

पुस्तक भेंट के निमित्त है

१९५७

सत्साहित्य प्रकाशन

संपादकीय

श्री देवीप्रसाद चट्टोपाध्याय बंगला के प्रसिद्ध लेखकों में से हैं। वैसे तो वह दर्शन-शास्त्र के प्रोफेसर हैं, पर उनकी विशेष दिलचस्पी वैज्ञानिक, प्राविधिक, ऐतिहासिक और इसी प्रकार के अन्य विषयों में है। इन्हीं विषयों पर उन्होंने अधिक लिखा भी है, खासकर बच्चों के लिए।

इस पुस्तक में लेखक ने पृथ्वी पर आरंभिक प्राणियों के आविर्भाव की और उनके क्रम-विकास की कहानी दी है। लाखों वर्षों के इस अविराम क्रम-विकास के कारण धरती ने अपना आज का-सा रूप पाया। इसी बीच आदिम वनमानुषों के एक वंश से हमारे आदि-पूर्वजों का जन्म हुआ। प्रगति के पथ पर सदियों की यात्रा तय करके वे सभ्यता के द्वार पर पहुंचे। आगे बढ़ने का यह क्रम इसी प्रकार लगातार चलता जा रहा है।

सारी बात बड़ी रोचक है, पर साथ ही वह इतनी ही जटिल भी है, लेकिन लेखक ने इसे इस पुस्तक में इतने सुंदर, सरस तथा सरल ढंग से समझाया है कि देखते ही बनता है।

हमें विश्वास है कि अपने इस रूप में यह पुस्तक पाठकों को पसंद आयगी और इससे उनका ज्ञानवर्द्धन होगा।

--संपादक

मनुष्य जन्मा

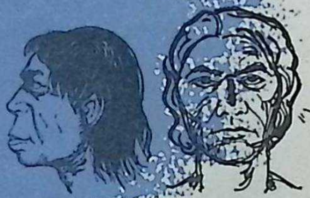

पृथ्वी पर जीवन का आविर्भाव

पृथ्वी पर सबसे पहले जीव का आविर्भाव कैसे हुआ ? इस रहस्य की खोज में वैज्ञानिक आज भी लगे हुए हैं। इसके बारे में उन्होंने बहुत-सी बातों का पता लगा लिया है और आज भी उनका अनुसंधान जारी है। उनकी गवेषणाओं से भविष्य में हमें पृथ्वी और जीवन के बारे में और भी बहुत-से तथ्यों का पता चलेगा और तभी हम इस प्रश्न का पूरा उत्तर दे सकेंगे।

हम यहां पर केवल उन्हीं बातों की चर्चा करेंगे, जिनके बारे में पूरी जानकारी हो चुकी है। वे बातें कौनसी हैं ?

पहली बात तो यह है कि प्राण या जीवन कोई अलौकिक वस्तु नहीं है। इसी पृथ्वी की बहुत-सी वस्तुओं का मिश्रण होते-होते आखिर में वस्तु सजीव बन जाती है। जिन वस्तुओं के मिश्रण से ऐसा होता है, वे कौनसी वस्तुएं हैं? वैज्ञानिकों का कहना है कि उन वस्तुओं में प्रधान कार्बन है। कार्बन के अलावा क्लोरीन, आयरन (लोहा), मैगनीशियम, आयोडीन, कैलशियम, मैंगनीज़, बोरोन इत्यादि अन्य कई वस्तुएं भी हैं। इस प्रकार की वस्तुओं को वैज्ञानिक **मौलिक पदार्थ** कहते हैं।

अब यह जानना आवश्यक है कि मौलिक पदार्थ किसको कहते हैं। यह एक उदाहरण से साफ हो जायगा। हिंदी को ही ले लो। उसमें तुम्हें

हजारों शब्द मिलेंगे, लेकिन अक्षर केवल ४६ ही हैं। हिंदी भाषा का हर शब्द इन ४६ अक्षरों में से ही कुछ अक्षरों के मिश्रण से बना है।

पृथ्वी की वस्तुओं का भी यही हाल है। पृथ्वी पर हजारों वस्तुएं तुम्हें देखने को मिलेंगी, जैसे, पानी, मिट्टी, कागज़, कलम, घास, फूल, लकड़ी, स्याही, अंडा, दूध, वगैरा। लेकिन जिस प्रकार हिंदी भाषा का हर शब्द उसके अक्षरों में से कुछ अक्षरों को लेकर बना है, उसी तरह इस पृथ्वी की हर वस्तु कुछ मौलिक पदार्थों से ही बनी हुई है। इस प्रकार के मौलिक पदार्थों की संख्या ९९ है। पृथ्वी की ऐसी कोई वस्तु नहीं होगी, जो इन ९९ मौलिक पदार्थों में-से ही कुछ के संमिश्रण से न बनी हो। इस प्रकार के मौलिक पदार्थों के संमिश्रण से जो भी वस्तु बनती है, उसको वैज्ञानिक **यौगिक पदार्थ** कहते हैं। उदाहरण के लिए पानी को ही ले लो। वह इसी प्रकार का एक यौगिक पदार्थ है और ऑक्सीजन और हाइड्रोजन नाम के दो मौलिक पदार्थों के संमिश्रण से बना है। नमक भी इसी प्रकार का एक यौगिक पदार्थ है, जो सोडियम और क्लोरीन नाम के दो मौलिक पदार्थों के संमिश्रण से बना है।

इसी प्रकार कार्बन, क्लोरीन, आयोडीन, मैगनीशियम और दूसरे बहुत-से मौलिक पदार्थों के संमिश्रण से सजीव वस्तु बनती है। इस सजीव वस्तु को **प्रोटोप्लाज़्म** कहते हैं। इसी प्रोटोप्लाज़्म से पृथ्वी के समस्त पेड़-पौधे, प्राणी, कीड़े-मकोड़े——एक शब्द में कहें तो——जीवित या सजीव कहलाने-वाली समस्त वस्तुएं और प्राणी बनकर तैयार हुए हैं।

सूर्य से पृथ्वी जब छिटककर आई, तब क्या प्रोटोप्लाज़्म नाम की कोई वस्तु पृथ्वी पर थी ? नहीं, उस समय ऐसी कोई वस्तु पृथ्वी पर नहीं थी, क्योंकि उस समय तो चारों ओर आग-ही-आग थी। सूर्य की तरह पृथ्वी भी आग का जलता गोला थी। उसके बाद धीरे-धीरे पृथ्वी ठंडी

होती गई और उस पर पहाड़, समुद्र, नदी आदि बनने लगे।

पृथ्वी पर पानी में धीरे-धीरे कुछ मौलिक पदार्थों के संमिश्रण से प्रोटोप्लाज़्म का उद्भव हुआ। यह कैसे हुआ और कब? इन प्रश्नों का उत्तर अभी वैज्ञानिक पूरी तरह नहीं दे सके हैं, हालांकि वे इसकी खोज में लगे हुए हैं। लेकिन इस बात का पता चल चुका है कि पानी पर आदिम प्रोटोप्लाज़्म की ये बूंदें ही पृथ्वी पर सर्व-प्रथम जीवधारी प्राणी थे।

स्वच्छ, फिसलनेवाली, छोटी-छोटी बूंदों की तरह थीं ये जीवधारी वस्तुएं। ये इतनी छोटी थीं कि आज के मनुष्य की आंखों से वे नजर नहीं आ सकतीं। ऐसी वस्तुओं के देखने के लिए वर्तमान युग के मनुष्य ने खुर्दबीन या सूक्ष्मवीक्षण यंत्र बनाया है, जिसकी सहायता से वह छोटी-छोटी वस्तुओं को बहुत बड़ा बनाकर देख सकता है। इन अति सूक्ष्म, छोटी-छोटी प्रोटोप्लाज़्म की बूंदों को ही हम मनुष्य का आदि-पूर्वज कह सकते हैं। मनुष्य ही क्यों, इस पृथ्वी के सभी पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, कीड़े-मकोड़े और दूसरे जीवधारी प्राणी, इन सबके आदि-पूर्वज ये प्रोटोप्लाज़्म ही हैं।

प्रोटोप्लाज़्म की हरएक बूंद को वैज्ञानिक **जीवकोष** कहते हैं। यह जीवकोष क्या है? जीवधारी वस्तु के सबसे सूक्ष्म भाग को जीवकोष कहते हैं। जैसे मिट्टी का बर्तन मिट्टी के बहुत छोटे-छोटे कणों से मिलकर बनता है, उसी तरह सब जीवधारी वस्तुएं भी इसी प्रकार के जीवकोषों से मिलकर बनती हैं। लेकिन मजे की बात यह है कि हर जीवकोष अलग-अलग अपनी-अपनी जगह पर एक-एक जीव है।

इसके हिसाब से हमारा शरीर सिर से लेकर पैर तक हजारों जीवकोषों से बना है और हर जीवकोष अपने स्थान पर एक सजीव वस्तु है। लेकिन पृथ्वी की प्रथम जीवधारी वस्तुएं--प्रोटोप्लाज़्म की बूंदें--हमारे शरीर की तरह जीवकोषों का समूह नहीं थीं, बल्कि एक-एक जीवकोष से बनी हुई

थीं। इसलिए इन जीवों को हम **इककोषी जीव** कह सकते हैं।

कितने आश्चर्य की बात है ! सारा शरीर क्या है—केवल जीवकोष-ही-जीवकोष है ! लेकिन इससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह है कि आज भी पृथ्वी पर इस प्रकार के सजीव जीवकोष का स्वतंत्र अस्तित्व है। सूक्ष्म-वीक्षण यंत्र से काई पड़े तालाब के पानी की जांच करने से आज भी हमें इस प्रकार के जीव दिखाई देते हैं। उनका नाम है **एमिबा**। एमिबा को देखकर हम अंदाज लगा लेते हैं कि आदिम युग में समुद्र के पानी में जिन प्रोटोप्लाज़्म की बूंदों का जन्म हुआ था, वे देखने में किस प्रकार की थीं और किस प्रकार जिंदा रहती थीं।

इककोषी जीव

खुर्दबीन से देखने पर काई पड़े तालाब के ये इककोषी जीव शक्ल में बड़े अजीब लगते हैं। उनका सारा शरीर अंडे की सफेदी की तरह साफ़, चिकना और गिलगिला होता है। इन बूंदों में हमारे शरीर की तरह हाथ-पैर या आंख-मुंह-जैसे कोई अलग-अलग अंग नहीं होते। उनका पूरा शरीर ही हर अंग का काम करता है। उस पूरी बूंद को हम उस सजीव वस्तु का मुंह भी कह सकते हैं, पैर भी कह सकते हैं और पेट भी कह सकते हैं ! क्योंकर ?

आगे बढ़ने के लिए वह अपने शरीर के किसी भाग को आगे धकेल देता है। इस भाग को हम भूठा-पैर (सिउडो-पौड) भी कह सकते हैं। यह एक भाग आगे धकेलने के बाद उसका सारा शरीर उसी तरफ लुढ़क जाता है। जब कोई खाने का दाना उसको मिलता है, तो वह सारे शरीर को टेढ़ा-मेढ़ा और गोल-मोल करके सारे दाने को जकड़ लेता है। उसके बाद पूरे दाने को वह अपने अंदर जज्ब कर लेता है। इसलिए उसके सारे शरीर को हम मुंह भी कह सकते हैं और पेट भी।

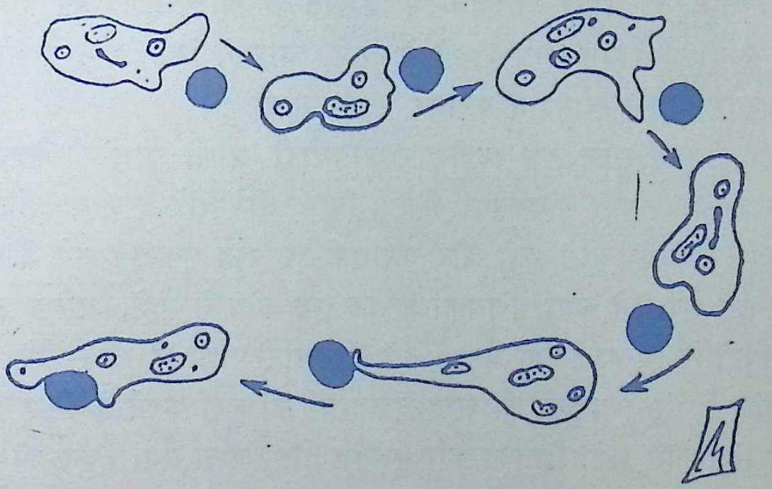

इककोषी जीव खाते कैसे हैं ?

इनके बच्चे भी अजीब तरह से जन्म लेते हैं। बाहर से इस प्रकार की वस्तुओं को अपने अंदर जज़्ब कर लेने से उनका शरीर बढ़ने लगता

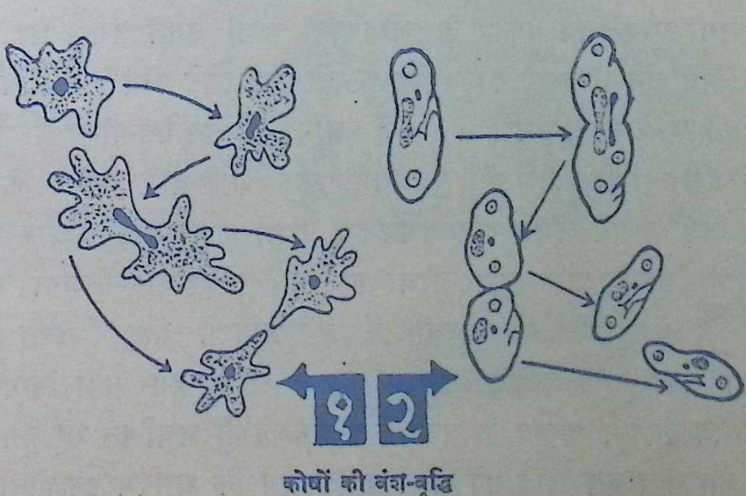

कोषों की वंश-वृद्धि

है। बढ़ते-बढ़ते शरीर दो भागों में विभक्त हो जाता है। इस तरह एक जीव से दो जीव बन जाते हैं, दो से चार, चार से आठ, आठ से सोलह। इस प्रकार इसका खानदान बराबर बढ़ता जाता है।

हजारों साल तक पृथ्वी पर जीवधारी प्राणी नाम की केवल एक ही वस्तु थी—यही इककोषी जीव। फिर धीरे-धीरे ये जीव छोटे-छोटे झुंडों में इकट्ठे होने लगे और यह एक-एक झुंड एक-एक नये जीवधारी प्राणी का रूप लेने लगा, जिसका शरीर एक कोष से नहीं, बल्कि हजारों जीवकोषों से मिलकर बना था। नये जीवधारी प्राणी में धीरे-धीरे शरीर की पांच विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भिन्न-भिन्न अंग बनने लगे, जिनका काम स्वतंत्र होता चला गया। कुछ जीवकोषों पर चलने-फिरने की जिम्मेदारी पड़ी तो कुछ को बच्चे पैदा करने का कर्तव्य निभाना पड़ा, कुछ पर कुछ और भार पड़ा।

आदिम मछली का आविर्भाव

इस तरह बदलते-बदलते इस सजीव वस्तु में भी धीरे-धीरे परिवर्तन आने लगा और नये प्रकार के जीवधारी प्राणी बनने लगे। अब पानी में नजर आने लगे सिवार, काई और हरे-हरे छोटे-छोटे पौधे। ये पौधे आदिम इककोषी जीव के ही वंश में से हैं और वर्तमान पेड़-पौधों के पूर्वज हैं। कुछ पेड़ पानी के अंदर ही रह गये, कुछ धीरे-धीरे पानी के किनारे अपनी जड़ें जमाने लगे। उस समय तक पृथ्वी के पहाड़-पर्वत और भूमि पर कहीं भी प्राणी तो क्या, पौधों का भी कोई नाम-निशान न था। आज के पेड़-पौधे, जो पृथ्वी के हर भाग में दिखाई पड़ते हैं, बहुत बाद में पैदा हुए। लेकिन उसकी चर्चा आज हम नहीं कर रहे हैं। इस समय तो हम मनुष्य के जन्म के विषय की ही चर्चा कर रहे हैं। इसलिए आज हम यहां इस बात की चर्चा नहीं करेंगे कि आदिम इककोषी जीव से

आदिम उद्भिद का जन्म कैसे हुआ और इस आदिम उद्भिद से सारी पृथ्वी पर पेड़-पौधे कैसे फैल गये। उद्भिद-जगत की बात छोड़कर हम सिर्फ प्राणि-जगत की बात करेंगे—विशेष रूप से इसकी किस तरह प्राणि-जगत के परिवर्तन से आज के मनुष्य का जन्म हुआ।

पृथ्वी पर जिन प्राणियों का आविर्भाव हुआ है, वे सब उसी इक-कोषी जीव के वंश में से हैं और उनका जन्म पानी में ही हुआ। करोड़ों साल पहले जब ये जीव झुंडों में इकट्ठे होने लगे और नये प्रकार के जीवों में परिवर्तित होने लगे, तो वे दो प्रकार के झुंडों में विभक्त हो गये। एक प्रकार के झुंडों से पैदा हुए पेड़-पौधे और दूसरे प्रकार के झुंडों से जन्मे सजीव प्राणी। आजकल के तमाम पेड़-पौधे, लता, सिवार, काई इत्यादि सब पहले झुंड के वंश में से हैं और आजकल के पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े, जीव-जंतु और जानवर दूसरे वंश में से हैं।

धीरे-धीरे दूसरे वंश के झुंड अलग-अलग रूप धारण करने लगे—कीड़े-मकोड़े, केंचुए, घोंघे, इत्यादि। आगे चलकर इनमें से एक अद्भुत ढंग का प्राणी सबसे आगे निकल गया। इस प्राणी को वैज्ञानिक **ट्राइलोबाइट** कहते हैं। करीब बीस करोड़ साल तक इस

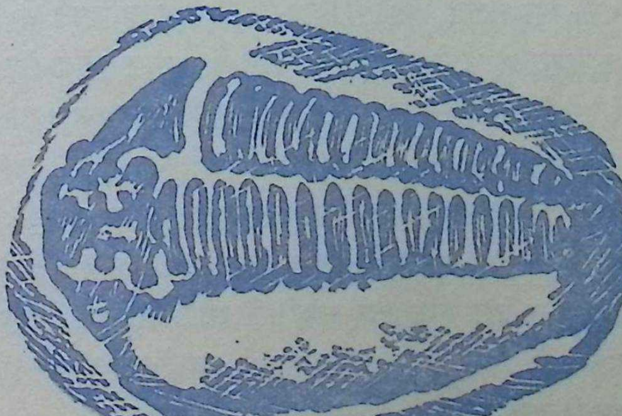

ट्राइलोबाइट का फॉसिल

ट्राइलोबाइट का पानी में एकाधिपत्य रहा। कोई पानी के अंदर कीचड़ में फंसकर रहता, कोई पानी के ऊपर तैरता। वे अपने खाने का प्रबंध भी पानी में से ही करते थे। उनके शरीर के ऊपर एक खास तरह की केंचुली होती थी, जिसकी वजह से उनका आत्मरक्षा करना आसान था। इनके बच्चे भी होते थे। हजारों ! इसलिए बहुत-से बच्चे नष्ट हो जाने पर भी इनके वंश का नाश नहीं होता था।

वर्तमान युग में भी पृथ्वी पर ट्राइलोबाइट के कुछ वंशधर जीवित हैं, जैसे बिच्छू, केकड़ा इत्यादि। लेकिन उस आदिम ट्राइलाबाइट का तो अब इतिहास ही शेष रह गया है। करीब बीस करोड़ साल जल-जगत पर राज करने के बाद आदिम ट्राइलोबाइट विलुप्त हो गये।

इस बीच में साफ पानी के नीचे एक नये प्रकार के जीव दिखाई पड़ने लगे। उनको कहा गया है **ओस्ट्रोकोडार्म**। उनका मुंह छंछूदर-जैसा था। मुंह में जबड़े नहीं थे और इसलिए वे किसी वस्तु को चबाकर नहीं खा सकते थे। तो फिर वे किस तरह खाते थे ? कीचड़ के बीच में मुंह डालकर वे खाने को चूसकर खाते थे। हां, उनके शरीर में एक और जरूरी अंग दिखाई देने लगा था। उसका नाम है **मस्तिष्क**। मस्तिष्क नाम की एक वस्तु इतनी कीमती क्यों है ? क्योंकि मनुष्य में मस्तिष्क ही सबसे मुख्य वस्तु है। इसीसे तमाम इंद्रियां काम करती हैं। इसीकी मदद से हम देखते हैं, सूंघते हैं, सुनते हैं, स्वाद लेते हैं, छूते हैं। यही नहीं, हम मनुष्य जो इतना जटिल काम कर सकते हैं और विभिन्न विषयों पर सोच-विचार कर सकते हैं, यह सब मस्तिष्क की बदौलत ही है और इसी कारण इसकी इतनी कदर है।

लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि ओस्ट्रोकोडार्म का मस्तिष्क मनुष्य के मस्तिष्क जैसा ही था। मनुष्य के मस्तिष्क की तुलना में ओस्ट्रोकोडार्म

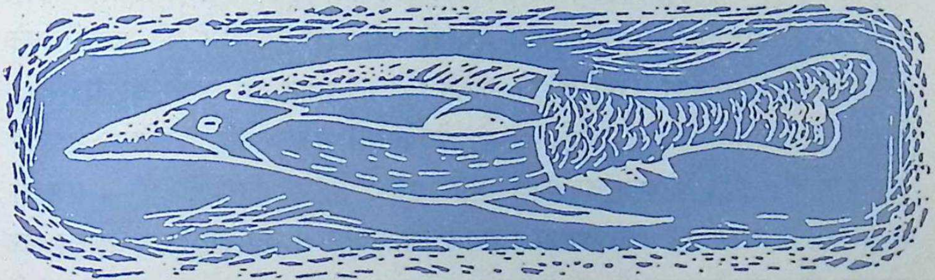

ग्रौस्ट्रोकोडार्म

का मस्तिष्क नगण्य था। इसलिए ऐसा सोचने का कोई कारण नहीं है कि उसकी इंद्रियां हमारी इंद्रियों की तरह तीक्ष्ण थीं ग्रौर उसकी चिंतन-शक्ति हमारी तरह थी। ऐसा समझना गलत होगा। मनुष्य के मस्तिष्क ग्रौर ग्रौस्ट्रोकाडार्म के मस्तिष्क में इतना फर्क है कि उनकी ग्रापस में तुलना की ही नहीं जा सकती।

परंतु ग्रौस्ट्रोकोडार्म के सिर में मस्तिष्क का होना ही पृथ्वी के इतिहास में एक ऐसी घटना है जिसका बहुत बड़ा महत्व है; क्योंकि इससे पहले किसी भी जीव के मस्तिष्क होने का कहीं भी प्रमाण नहीं मिलता। ग्रौस्ट्रोकोडार्म का मस्तिष्क कितना ही स्थूल ग्रौर सीधा-सादा क्यों न हो, लेकिन उसके कारण वह उस युग का सबसे श्रेष्ठ प्राणी हो गया। ग्राज जिस तरह मनुष्य इस युग का सबसे श्रेष्ठ प्राणी समझा जाता है, उसी तरह यह छंछूदर-जैसे मुंहवाला ग्रौर जबड़ा-विहीन ग्रौस्ट्रोकोडार्म साढ़े सात करोड़ साल तक ग्रपने युग का सबसे श्रेष्ठ प्राणी बना रहा।

बाद में धीरे-धीरे इसी ग्रौस्ट्रोकोडार्म के वंशज बदलते-बदलते ग्रादिम मछली का रूप लेने लगे। क्या ग्रादिम मछली के शरीर में मस्तिष्क था? हां, था। लेकिन इसके ग्रलावा उसमें एक ग्रौर भी वस्तु थी, ग्रौर वह थी

रीढ़ की हड्डी। औस्ट्रोकोडार्म के शरीर में रीढ़ की हड्डी नहीं थी। पृथ्वी पर रीढ़ की हड्डीवाला प्रथम प्राणी मछली ही था। रीढ़ की हड्डीवाले प्राणियों को **मेरुदंडी (वर्टीब्रेंट)** कहते हैं। आज हमें बहुत-से जीव-जंतु मिलते हैं, जिनके रीढ़ की हड्डियां हैं, लेकिन ये सब उसी आदिम मछली के वंशज हैं। रीढ़ के अलावा इनमें एक और चीज दिखाई दी––मछली के मुंह में––और वह थी **जबड़ा।** जबड़े की वजह से वह चबाकर खाना खा सकती थी। इसके अलावा उसके शरीर में एक और नया अंग था। वह क्या ? वह था उसका **डैना।** डैने को हिला-चलाकर और पूंछ हिलाकर मछली पानी में तैर सकती है और इधर-से-उधर आ-जा सकती है। जिंदा रहने के लिए कितनी सुविधा हो गई ! इतनी सुविधा थी, इसीलिए दूसरे प्राणियों की अपेक्षा ये मछलियां ज्यादा दिन जिंदा रह सकीं।

धीरे-धीरे पृथ्वी का सारा जल-भाग मछलियों से भर गया और करीब पांच करोड़ साल तक मछलियां ही प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ जीव बनी रहीं, ठीक उसी तरह से जैसे आज हम––मनुष्य—पृथ्वी के सर्वश्रेष्ठ जीव हैं।

जल से थल की ओर

इधर जल में मछली का युग शुरू होने के साथ ही स्थल पर हरियाली के चिह्न दिखाई पड़ने लगे––लता, बेल, घास, पात। लेकिन यह हरियाली आजकल की तरह के घास-पेड़ों या लताओं की नहीं थी, क्योंकि उन उद्भिदों की जड़ नहीं होती थी। आजकल के उद्भिदों की जड़ होती है। ऐसा मालूम होता था मानो मिट्टी के ऊपर उनको किसीने रख दिया हो। जल में जब मछली का युग था, तो स्थल पर इन उद्भिदों के अलावा कुछ न था। प्राणी का आविर्भाव तो स्थल पर बहुत बाद में हुआ।

स्थल पर प्रथम प्राणी क्या थे ? वे आदिम मछली के ही वंशधर थे। वे जल में से निकलकर आये थे। इस माला की दूसरी पुस्तक **'जीव आया'**

में हमने कोयलाकांत मछली का उल्लेख करते समय बताया था कि उसके पूर्व आदिम मछली के वंशधर दो तरीकों से दो भागों या दलों में बंट गये थे। एक दलवाले के शरीर में सांस लेने के लिए गलफड़ों के अलावा फ़ेफड़े-जैसा अंग बढ़ने लगा और उनके डैने के नीचेवाले भाग में ऊंचा उठा हुआ टीला-जैसा एक हिस्सा दिखाई पड़ने लगा और उसके नीचे हड्डी। यह आदिम फेफड़ा आगे जाकर बढ़कर पूरा फेफड़ा बन गया और डैने के नीचे की उठी हुई जगह से निकली टांग। इस तरह आदिम मछली के वंश में से एक भाग जल और स्थल दोनों पर चलने-फिरने के योग्य बन गया, अर्थात वह **उभय-चर** हो गया।

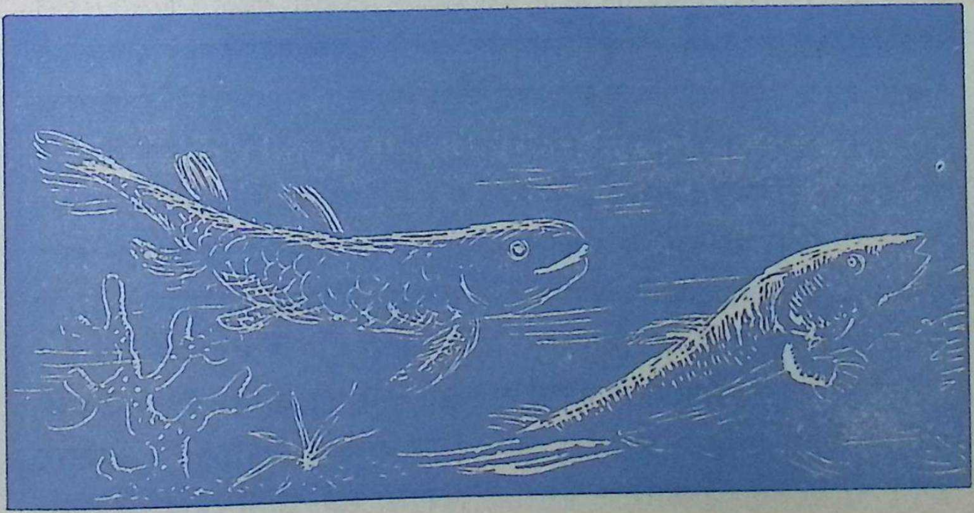

जल से थल की ओर

उभयचर कैसे ? जल छोड़कर स्थल पर आने की क्षमता तो आई, और जल छोड़कर स्थल पर उनका जीवित रहना संभव हो भी गया, लेकिन फिर भी जल से उनका संबंध पूरी तरह टूट नहीं पाया। उनके जीवन का

कुछ समय जल में गुजरता था और कुछ समय स्थल पर। इसीलिए वे उभयचर कहलाये।

लेकिन वे पूरे स्थलचर नहीं बन सके। इसका क्या कारण था ? इसका कारण यह था कि वे अंडे देते थे। उनके अंडे बहुत नरम होते थे और स्थल पर वे अंडे बड़ी जल्दी नष्ट हो जाते थे। इसलिए अंडे देने के समय उनका जल में जाना जरूरी था। इतने नरम अंडे पानी में काफी हिफाजत से रहते थे। ये अंडे कैसे होते थे ? आजकल के उभयचरों के अंडों की परीक्षा करके देखने से यह बात समझ में आ जायगी। वे भी बहुत-कुछ वैसे ही होते हैं।

लेकिन पूछा जा सकता है कि जल में रहती मछली के पूर्व-पुरुषों के लिए थल पर आने की या उभयचर बनने की आवश्यकता क्यों पड़ी ? इसका कारण यह था कि उनके पास जीने के लिए ऐसा करने के अलावा और कोई चारा न था। क्यों ? उस समय पृथ्वी की आबोहवा बड़ी तेजी के साथ बदल रही थी। गरमी ऐसी थी कि समुद्रों का पानी उड़ता जाता था और लगता था कि जैसे कुछ काल के बाद समुद्र में पानी ही नहीं रहेगा। गरमी की अधिकता, वर्षा के अभाव और समुद्र में पानी की कमी के कारण उसमें रहनेवाले प्राणी हजारों-लाखों की संख्या में मौत के मुंह में जाने लगे। लेकिन प्राणी तो आसानी से मरना नहीं चाहता। वह जीना चाहता है और जीने के लिए प्रयत्न करता है। इसके लिए वह परिस्थितियों के अनुसार अपने को बदलने की कोशिश करता है। बदली हुई परिस्थितियों के अनु-रूप अपने को ढालकर ही वह जीवित रहता है।

उस युग में भी समुद्र में रहनेवाले प्राणियों ने अपने को बदलती परिस्थितियों के अनुसार ढालने की कोशिश की। तब स्थिति का तकाजा यही था कि जिंदा रहने के लिए समुद्र में रहनेवाले प्राणी—जलचर—जल

को छोड़ थल पर आयें। जल के प्राणियों के पहले उभयचर और फिर थलचर बनने का यही कारण था।

सरीसृप का युग

उभयचर का युग आज से कोई बीस करोड़ साल पहले की बात है। इसके बाद सारे प्राणि-जगत में इनके ही वंश के एक और प्रकार के जीवों का राज शुरू हुआ, जिन्हें **सरीसृप (रेप्टाइल)** कहते हैं। सरीसृप किनको कहते हैं? उन जीवों को, जो छाती के बल पर चलते हैं, जैसे सांप, छिपकली, गिरगिट आदि। इनमें से कुछ के पैर हैं, कुछ के नहीं। किंतु यह बड़ी बात नहीं है। बड़ी बात तो यह है कि वे छाती के बल चलते हैं।

लेकिन सरीसृप एकदम स्थलचर हैं। इसका मतलब यह है कि ये जीव एक ऐसे स्तर पर पहुंचे हुए हैं, जिनको जीता रहने के लिए जल में जाने की आवश्यकता नहीं होती। लेकिन यह कैसे संभव हुआ? ऐसा इसलिए हो सका कि सरीसृप को अंडे देने के लिए जल में नहीं जाना पड़ता। क्यों? उनके अंडे उभयचरों के अंडों की तरह नरम नहीं होते। सरीसृप के अंडे के ऊपर एक सख्त खोल होती है, जिससे ये अंडे स्थल पर ही हिफाजत से रह सकते हैं। इसलिए अंडे देने के लिए सरीसृप-जाति के जीवों को जल में जाने की जरूरत नहीं है।

इसके अलावा भी सरीसृप को और कई सुविधाएं प्राप्त हैं। चलने-फिरने की सुविधा, सांस लेने की सुविधा। इन सुविधाओं की वजह से पृथ्वी पर यही जीव प्रधान प्राणी का रूप धारण करने लगे। लेकिन सारे सरीसृप एक प्रकार के नहीं हैं। उभयचर के वंशज बदलते-बदलते कई प्रकार के सरीसृप बने। किसीके पैर मजबूत हैं और चलते समय वे अपना सारा भार छाती पर नहीं डालते, तो किसीके शरीर पर से पैरों के निशान तक खत्म हो गये हैं, जैसे सांप। किसीके पैर बदलते-बदलते नाव के डांड़ की तरह

हो गये और वे जल के जीवन में लौट गये, तो किसीके शरीर पर पैर के बदले चमड़े के पंख बन गये, जैसे आज के चमगादड़। इसके फलस्वरूप सरीसृप होते हुए भी वे आकाश में उड़ने के योग्य हो गये। लेकिन इससे यह मत समझ लेना कि वे आजकल के पक्षियों के पूर्वज थे। ये सरीसृप आजकल के पक्षियों की तरह नहीं थे और न इनके पूर्व-पुरुष। आजकल के पक्षी उस समय के दूसरी प्रकार के सरीसृपों के वंशज हैं, इन सरीसृपों के नहीं।

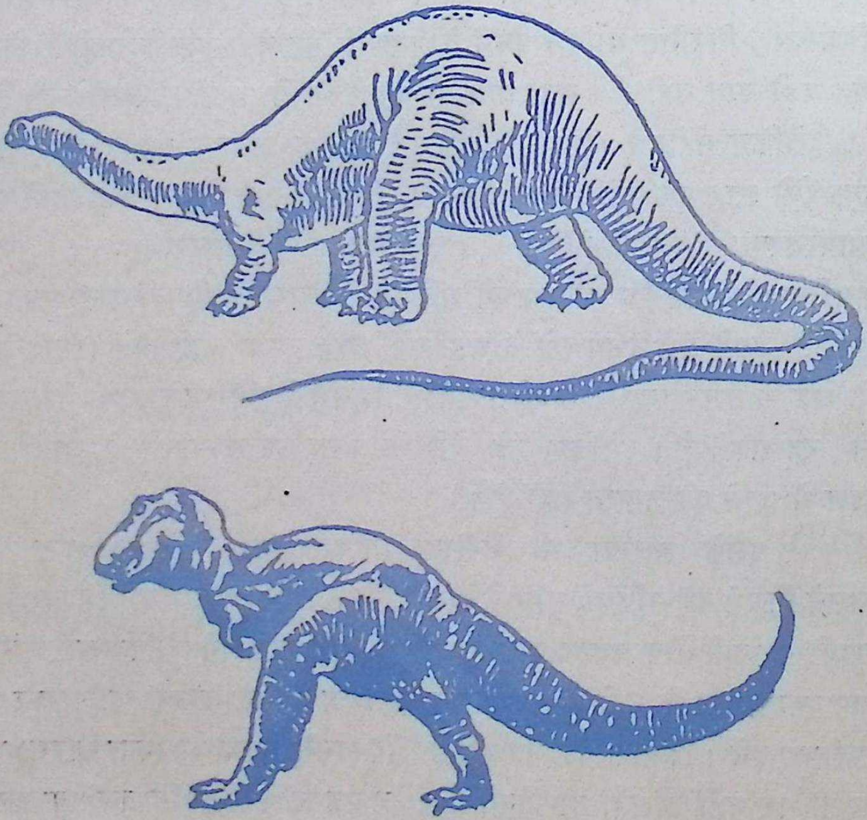

दो प्रकार के डाइनोसर (देखो पृष्ठ १९)

इन भिन्न-भिन्न प्रकार के सरीसृपों में से जिसमें हमें सबसे ज्यादा दिलचस्पी है, वह है **डाइनोसर**। पृथ्वी पर इतने बीभत्स और इतने बड़े जानवर आजतक नहीं देखने में आये। आजकल के हाथी, ऊंट, गेंड़ा आदि भी उसके सामने बहुत नगण्य जीव हैं। अनेक प्रकार के डाइनोसर हुए हैं और उनको विभिन्न नाम दिये गये हैं। एक का नाम **डिपलोडोकस** था, जिसकी लंबाई करीब ५२ हाथ थी। लेकिन यह निरामिष आहारी था और बुद्धि-हीन जीव था। यह जंतु भीमकाय अवश्य था, लेकिन जहांतक इसके मस्तिष्क का सवाल है, वह मुर्गी के अंडे की तरह था। मनुष्य की तुलना में यह कितना बुद्धिहीन था, यह इसके मस्तिष्क के आकार से ही पता चल जाता है। मनुष्य का शरीर करीब साढ़े तीन हाथ का होता है, लेकिन उसके मस्तिष्क का वजन लगभग डेढ़ सेर होता है, अर्थात अगर कोई तीस-एक डिपलोडोकसों के मस्तिष्कों को इकट्ठा किया जाय, तो उनका भार एक मनुष्य के बराबर जाकर बैठता है। लेकिन इससे यह भी समझना भूल होगी कि बुद्धि की सीमा भी इसी अनुपात में थी, क्योंकि बुद्धि केवल मस्तिष्क के भार पर ही नहीं, बल्कि और भी बहुत-सी बातों पर निर्भर करती है, जिसमें मस्तिष्क का आकार भी एक है। मनुष्य का मस्तिष्क केवल भार में ही अधिक नहीं होता, बल्कि आकार में भी अच्छा होता है। यही कारण है कि हमारी बुद्धि इतनी आगे बढ़ी हुई है।

एक और प्रकार का डाइनोसर होता था, जिसको **ब्रासीओसरास** कहते हैं। इस जीव का भार करीब ४५० मन होता था और उसका गला इतना लंबा होता था कि जमीन पर खड़े होकर वह आजकल के तिमंजिले मकान की खिड़की में से आसानी से झांक सकता था!

डाइनोसर की और भी किस्में थीं, जिनमें एक का नाम है **टिरेनोसरास**। अगर उसको साक्षात यमदूत कहा जाय, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

उसकी लंबाई थी १९ फुट—यानी एक साधारण मनुष्य की लंबाई की लगभग तिगुनी। उसके पिछले दोनों पैर दो खंभे जैसे थे और अगले पैर छोटे। उसका मुंह बहुत-ही बड़ा था और दांत मूलियों की तरह। उसकी पूंछ की फटकार से सारा जंगल कांप उठता था। यह एकदम मांसाहारी था और आजतक पृथ्वी पर इतने मांसाहारी जीव कभी देखने में नहीं आये। इसीलिए जब यह शिकार की खोज में निकलता था, तो दूसरे सब महाकाय डाइनोसर डर से कांपने लगते थे।

इसी प्रकार ऐसे ही कई तरह के डाइनोसर लाखों वर्षों तक पृथ्वी की छाती पर अपना राज चलाते रहे।

पर इतने विशाल शरीर से ही क्या होता है ? आखिर ये भी इस संसार से लोप हो गये और शेष रह गये केवल उनके अस्थि-पंजरों के कुछ फॉसिल।

वे लुप्त कैसे हुए ? आज से लगभग छः करोड़ साल पहले की बात है। पृथ्वी की छाती पर एक प्रचंड हलचल शुरू हुई। बड़े-बड़े जलाशय और तालाब सूखने

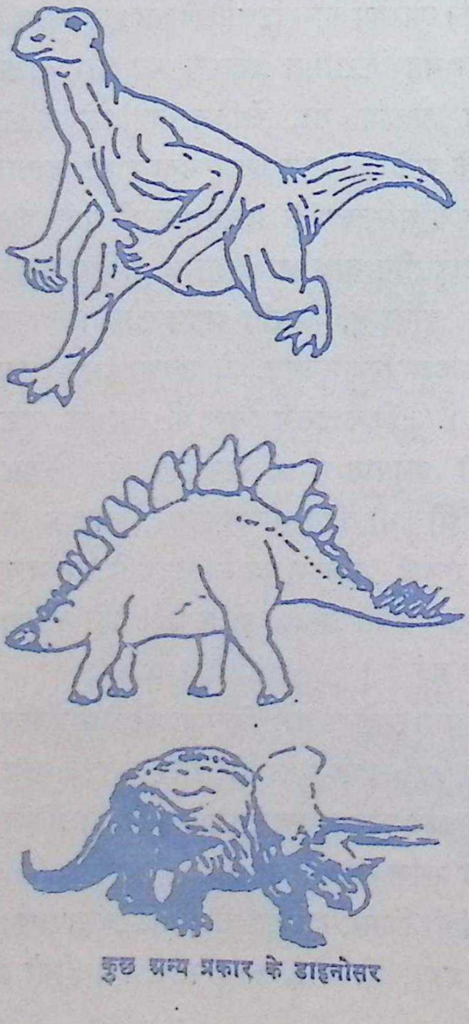

कुछ अन्य प्रकार के डाइनोसर

लगे। जमीन फोड़कर निकलने लगीं पहाड़ों की चोटियां। उत्तर से सूखी और बर्फीली हवाएं चलने लगीं। उस हवा से पेड़ और पौधे मरने लगे।

पृथ्वी की शक्ल भी तेजी के साथ बदलने लगी। इससे पहले की जलवायु डाइनोसर जाति के लिए बहुत अच्छी थी, क्योंकि उनमें से बहुत-से पानी में अपना शरीर डुबोकर रहते थे और भीगे शरीर पर गरम हवा बहुत अच्छी लगती थी। लेकिन अब डाइनोसर नई और बदलती हुई अवस्थाओं के साथ अपने-आपको बदल नहीं पाये। नतीजा यह हुआ कि वे इस संसार से मिट गये और इस प्रकार सरीसृपों के युग का अवसान हो गया।

स्तनपाइयों का युग

इस बीच में पृथ्वी की छाती पर एक और प्रकार के जीव दिखाई दिये। इनकी शक्ल थी चूहों की तरह, इसलिए डाइनासरों की तुलना में ये नगण्य थे, लेकिन फिर भी डाइनसरों के साथ इनका वंश-संबंध था, क्योंकि ये सरीसृपों के ही वंशज थे और उन्हींकी एक शाखा से परिवर्तित होते-होते इस रूप में आये थे।

इनको **स्तनपाई (मैमल)** कहा जाता है। इनका शरीर छोटा था, लेकिन जिंदा रहने के लिए इनके पास कई प्रकार की सुविधाएं थीं, जो डाइनोसर के पास न थीं ये। सुविधाएं क्या थीं ? पहली बात तो यह कि इनके शरीर पर **बाल** थे और दूसरी यह कि इनका **लहू गर्म** था।

गर्म लहू का क्या मतलब ? असल में जीवों में खून दो प्रकार का हो सकता है। एक प्रकार के जीवों में बाहर के ताप के अनुसार उनके रक्त का ताप भी चढ़ता-उतरता रहता है—बाहर ठंड होने पर उनका खून भी ठंडा पड़ जाता है। बाहर गरमी पड़ने पर उनका खून भी गर्म हो जाता है। ऐसे खून को **ठंडा लहू** कहा जाता है। दूसरे प्रकार के जीव ऐसे होते

हैं कि बाहर के ताप पर उनके खून का ताप निर्भर नहीं करता। शरीर में खून का ताप सदा एक ही-सा रहता है। ऐसे खून को **गर्म लहू** कहते हैं।

पृथ्वी की जलवायु हमेशा एक-सी नहीं रहती। इसलिए जिंदा रहने के लिए गर्म खून ठंडे खून से ज्यादा सुविधाजनक होता है।

स्तनपाई से पहले जितने जीव हुए, उन सबका खून ठंडा था, यहां तक कि उस महाकाय डाइनोसर का खून भी ठंडा ही था। इसीलिए करीब छः करोड़ साल पहले, जब पृथ्वी पर प्रचंड वातावरण का आरंभ हुआ, सूखी और हिम-जैसी ठंडी हवाएं चलने लगीं, तो डाइनोसर भी नष्ट हो गये। लेकिन स्तनपाई देखने में इतने छोटे होते हुए भी बच गये, क्योंकि उनके शरीर पर बाल थे और उनके शरीर में गर्म खून था।

इसके अलावा स्तनपाइयों को कई और सुविधाएं थीं। उनका मस्तिष्क बहुत अच्छा था। वे काफी हाशियार और चौकन्ने थे। उनके दांत अच्छे थे और पैर मजबूत; और उनके शरीर में सांस लेने की व्यवस्था भी अधिक उन्नत थी। इसके अतिरिक्त एक जबरदस्त सुविधा उन्हें प्राप्त थी——वे अंडे नहीं देते थे, बल्कि उनके बदले बने-बनाये बच्चे जनते थे।

सरीसृप तक सारे जीव अंडे देते थे। अंडे देने के लिए अच्छी और ठीक जगह होनी चाहिए। फिर अंडे देने बाद उन्हें अच्छी तरह सेने की आवश्यकता पड़ती है। तब जाकर उन अंडों में से फूटकर बच्चे निकलते हैं। इस सब में बड़ी असुविधा है। स्तनपाइयों के बच्चे जन सकने के कारण बहुत-सी असुविधाएं दूर हो गईं। बच्चे जनने के बाद बच्चे के लिए अन्न-संग्रह की समस्या का अंत हो गया, क्योंकि बच्चे मां के स्तनों से दूध पी सकते थे। ये जीव मां के स्तन से दूध पीकर जिंदा रहते थे, इसीलिए इनका नाम **स्तनपाई** हुआ।

ठीक है कि शुरू में स्तनपाइयों का शरीर बड़ा तुच्छ था। लेकिन

उन्हें अन्य कई प्रकार की सुविधाएं प्राप्त थीं, इसलिए जहां जीवन-संग्राम में और सब मर मिटे, ये बचे रहे और जीवों में सर्वश्रेष्ठ हो गये।

पृथ्वी पर जो सबसे पहले स्तनपाई दिखाई दिये, उन्हींके वंशज धीरे-धीरे बदलते-बदलते आखिर में अनेक प्रकार के पशु बने--चिमगादड़, शेर, हाथी, ज़ेबरा, जिराफ, इत्यादि। इन्हीं स्तनपाइयों के वंशजों में से एक किस्म ने पेड़ों की डालों पर अपना घर बनाना शुरू किया। हम--आजकल की मानव-जाति--उन्हीं पेड़ों की डालों पर घर बनानेवाले स्तनपाइयों के वंशज हैं।

उनका क्या नाम था ? **प्राइमेट**। आजकल ये प्राइमेट नहीं दिखाई पड़ते। लेकिन प्राइमेटों के अनेक प्रकार के वंशज दिखाई पड़ते हैं--अनेक प्रकार के वानर और वनमानुष। वनमानुष भी सभी एक प्रकार के नहीं होते। एक प्रकार के का नाम है औरंग ओटांग, किसीका नाम है शिंपाजी, किसी-का गोरिल्ला।

चार पैर के बदल दो पैर

तो ये सब प्राइवेट थे। इन्हींके एक दल के वंशधर आगे जाकर वनमानुषों में बदल गये और उनकी संतान मानव-जाति है। आज ये प्राइ-मेट पृथ्वी पर ढूंढ़े भी नहीं मिलते। यही नहीं, उन सब वनमानुषों का भी, जिसके एक दल से मनुष्य बना, विलोप हो गया है। लेकिन वैज्ञानिकों ने खोज से इस बात का पता लगा लिया है कि एक तरह के वनमानुषों के वंशज बदलते-बदलते किस तरह मनुष्य के स्तर पर पहुंच गये।

सो कैसे ?

ये वनमानुष पेड़ों पर रहते थे। उनके शरीर पर बाल थे। मुंह पर बाल थे। दुम भी थी। हाथ नाम की कोई वस्तु नहीं थी। हाथ और पैर के बदले चार पैर ही थे।

युग	प्रधान प्राणी	समय (वर्षों में)
पोलिजोइक युग	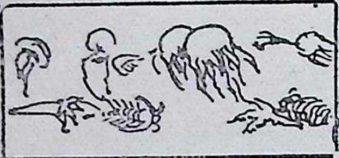	७०,००,००,००० से ५५,००,००,००० तक
		५९,००,००,००० से ४८,००,००,००० तक
	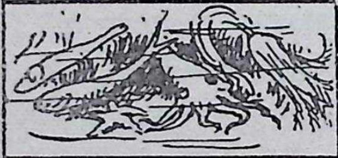	४६,००,००,००० से ३९,००,००,००० तक
	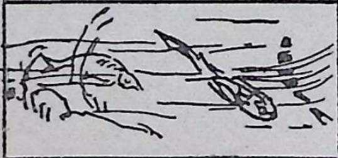	४२,००,००,००० से ३६,००,००,००० तक
	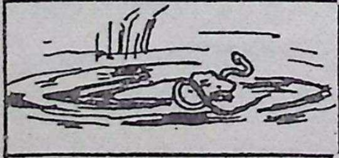	३७,००,००,००० से ३०,००,००,००० तक
	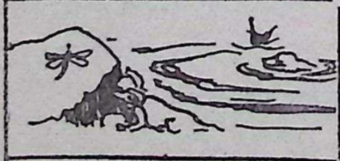	३३,००,००,००० से २५,००,००,००० तक
	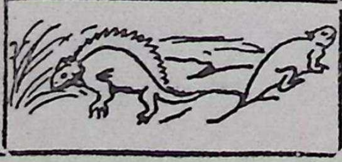	२८,००,००,००० से २१,५०,००,००० तक

युग	प्रधान प्राणी	समय (वर्षों में)
मैसोज़ोइक युग	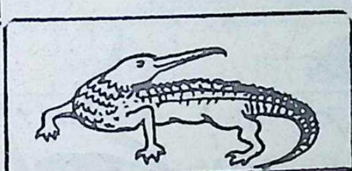	२४,००,००,००० से १९,००,००,००० तक
		१९,५०,००,००० से १५,५०,००,००० तक
	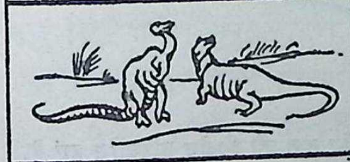	१५,००,००,००० से १२,००,००,००० तक
		१५,५०,००,००० से ९,५०,००,००० तक
		१३,६०,००,००० से ११,६०,००,००० तक
सैनोज़ोइक युग		१०,००,००० तक
	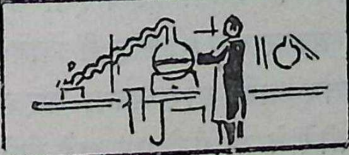	१५,००,००० से

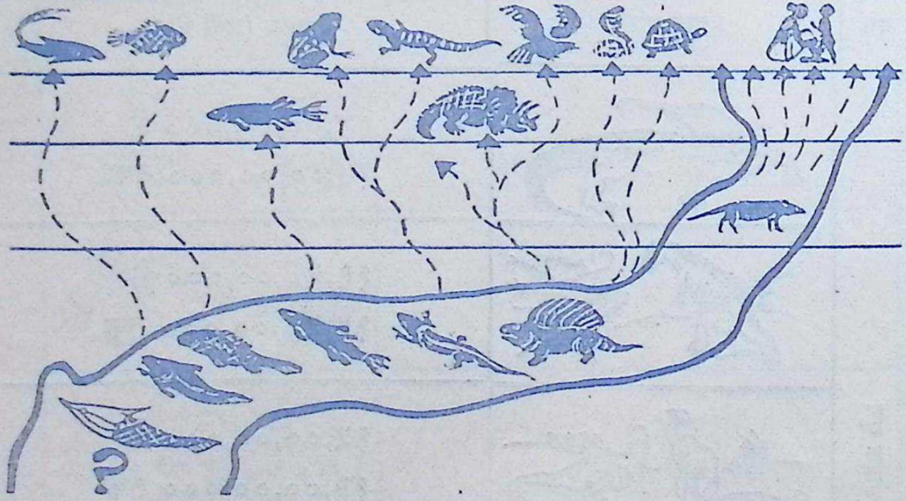

प्राणि-जगत का परिवर्तन : मनुष्य के आविर्भाव तक जो विशेष परिवर्तन हुए हैं; वे मोटी लकीरों के बीच दिखाये गये हैं

पेड़ों पर चलने-फिरने के लिए पिछले दो पैरों की अपेक्षा अगले दो पैरों की आवश्यकता ज्यादा पड़ती थी। पेड़ों की डालों को पकड़ने से लेकर फल-फूल, कंद-मूल इकट्ठा करना, उन को मुंह में डालना, इन सब कामों में अगले दो पैरों को ही ज्यादा काम करना पड़ता था। इसी कारण प्राकृतिक चयन के नियमानुसार इन सब वनमानुषों में से केवल वे ही बच सके, जिनका अपना वैशिष्ट था, अर्थात जिनके अगले दो पैरों में पिछले दो पैरों से अधिक क्षमता थी। इस प्रकार प्रकृति के विरुद्ध जूझते-जूझते वनमानुष के अगले दो पैरों में पिछले दो पैरों से भिन्नता आने लगी।

और उसके बाद एक बड़ी आश्चर्यजनक घटना हुई। ऐसी घटनाएं पृथ्वी के इतिहास में बहुत कम हुई हैं। यह घटना क्या थी? इन्हीं चार पैरों-वाले वनमानुषों में से कुछ पेड़ों से नीचे उतर आये और अपना घर जमीन पर बनाने लगे और वहीं रहने लगे। धीरे-धीरे वे दो पैरों पर खड़े होने लगे

श्रौर फिर दो पैरों से चलना सीख गये।

यह घटना कैसे घटी ? कितने दिन पहले ?

वैज्ञानिकों का श्रनुमान है कि यह कम-से-कम दस लाख साल पहले की बात है। इससे श्रधिक समय पहले की बात भी हो सकती है। उस समय पृथ्वी की रूपरेखा का मानचित्र भी भिन्न था। श्राज जहां हिंद महासागर है, वहां सागर ही नहीं था—बल्कि था एक महादेश। श्राज वह देश महासागर के गर्भ में विलुप्त हो चुका है।

लाखों साल हुए, उस विलुप्त महादेश के बहुत बड़े भू-भाग से वन-जंगलों के चिह्न मिट गये। किस कारण, यह श्राज बताना मुश्किल है। हो सकता है दावानल में जलकर राख हो गये हों; हो सकता है भूकंप से धंसकर जमीन के गर्भ में चले गये हों; श्रथवा किन्हीं श्रन्य प्राकृतिक कारणों से उनका नाश हो गया हो। वैज्ञानिकों का कहना है कि कारण कुछ भी हो, यह सच है कि वन मिट गये, श्रौर इन पेड़ों के मिट जाने की वजह से इन वनमानुषों को विवश होकर भूमि पर श्राना पड़ा।

यह हम पहले बता चुके हैं जब ये पेड़ों की डालों पर श्रपने जीवन-निर्वाह के लिए घूमते थे, उसी समय से उनके श्रगले दो पैरों में पिछले दो से भिन्नता श्राने लग गई थी। समतल भूमि पर पैर पड़ने के बाद यह विभिन्नता श्रौर बढ़ती चली गई। वनमानुष के ये वंशज समय-क्रम में पिछले दो पैरों पर खड़े होना सीख गये श्रौर फिर उन पर चलना भी।

लेकिन श्रगले दो पैरों का क्या हुश्रा ? पेड़ों पर रहते समय श्रगले दो पैरों में पिछले पैरों से श्रंतर श्राने लगा था श्रौर जब ये वनमानुष जमीन पर पिछले दो पैरों पर चलने लगे, तो श्रगले दो पैरों में श्रौर भी विभिन्नता श्राने लगी। बदलते-बदलते हजारों सालों के समय में, कई वंशों के नष्ट होने के बाद, ये श्रगले दो पैर मनुष्य के दो हाथों में परिवर्तित हो गये। नतीजे

के तौर पर वनमानुष भी वनमानुष नहीं रहा—और हो गया आदिम मनुष्य !

आज हम अपने इन हाथों के कारण ही मनुष्य कहलाते हैं। मनुष्य

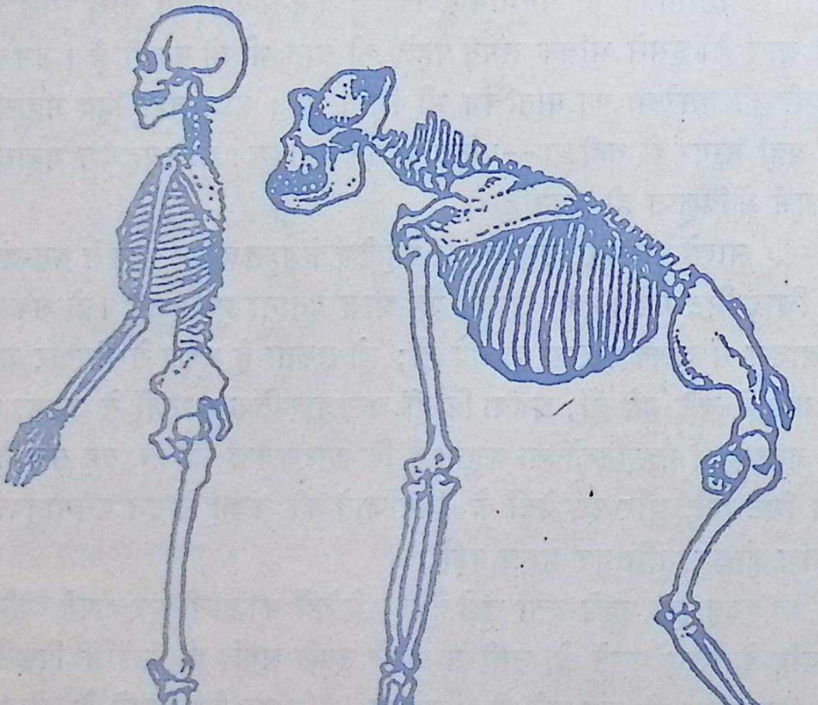

गोरिल्ला और मनुष्य के अस्थिपंजर की तुलना : मनुष्य का अस्थिपंजर कैसा सीधा खड़ा है ! और हाथ !

नामी प्राणी के सिवा और किसी भी जीव के हाथ नहीं है। शिंपाजी के

पंजे हैं, गोरिल्ला के भी पंजे हैं, लेकिन उनके हाथ नहीं हैं। उन पंजों से ज्यादा-से-ज्यादा वे कोई वस्तु पकड़ने की चेष्टा कर सकते हैं। लेकिन उससे वे **हथियार** नहीं बना सकते। मनुष्य के हाथ हैं। उनसे वह हथियार बना सकता है। ग्रौर चूंकि मनुष्य हथियार बना सकता है, इसीलिए वह तमाम दूसरे जीवों से भिन्न है।

हथियार किसको कहते हैं ? उसको, जिसको लेकर हम पृथ्वी पर संघर्ष कर सकते हैं ग्रौर पृथ्वी को बदल सकते हैं, जैसे हंसिया ग्रौर हथौड़ा, तीर ग्रौर कमान, कुदाल ग्रौर फावड़ा इत्यादि।

इन हथियारों के कारण ही मनुष्य दूसरे जीवों से भिन्न क्यों है ? इसलिए कि जिन जीवों के पास हथियार नहीं हैं, वे पृथ्वी की दया पर जीवित हैं। वे हर चीज के लिए पृथ्वी की ग्रोर मुंह बाये रहते हैं। भाग्य-वशात ग्रगर कहीं ग्रन्न मिल गया तो पेट भर गया, ग्रन्यथा नहीं। कहीं ठह-रने के लिए जगह मिल गई तो रह गये, ग्रन्यथा नहीं। लेकिन मनुष्य क्या पृथ्वी पर इतनी ग्रसहाय ग्रवस्था में, इतनी ही निरुपाय ग्रवस्था में रहता है ? निश्चय ही नहीं। मनुष्य पृथ्वी पर संघर्ष करता है। जीविका-निर्वाह के सामान को पाने के लिए संग्राम करता है ग्रौर उसको हासिल करता है। इसीलिए मनुष्य पृथ्वी की छाती पर ग्रन्न उगाता है, रुई को कातकर उससे कपड़ा तैयार करता है, पत्थर से मकान तैग्रार करता है। लेकिन यही क्या सब कुछ है ? इतने से ही वह चुप नहीं बैठता। हवाई जहाज बनाकर मनुष्य ग्राकाश को जीतता है, गोताखोरों की पोशाक पहनकर वह समुद्र में उतरकर पाताल जीतने के लिए निकलता है। यही नहीं, हर प्रकार से वह विश्व पर विजय पाने के लिए जूझता है, संग्राम करता है ग्रौर ग्रागे बढ़ता जाता है।

मनुष्य ने जो कुछ पाया है, विश्व-विजय की ग्रोर वह जितना ग्रग्रसर हुग्रा है, प्रकृति के नियमों को जितना उसने जाना है, उन सबका सबसे बड़ा

कारण है उसका हाथ—वह हाथ जिससे वह हथियार बनाता है। पृथ्वी के और किसी जीव के हाथ नहीं। केवल मनुष्य के ही हैं। दूसरे असहाय और निरुपाय बनकर पृथ्वी का मुंह देखते हुए जिंदा रहने की चेष्टा करते हैं। मनुष्य अपने हाथों के बलबूतों पर विश्व-विजय की दुंदुभी बजाता है।

प्रश्न यह होगा कि मनुष्य की प्रगति में क्या केवल हाथ का ही हाथ है ? बुद्धि की कोई देन नहीं है ? मनुष्य जो पृथ्वी पर श्रेष्ठ प्राणी बना, उसका असली कारण क्या बुद्धि नहीं है ? अवश्य, इसमें संदेह नहीं कि मनुष्य की बुद्धि जितनी विकसित है, उतनी और किसी जीव की नहीं है। इसी बुद्धि के बल पर मनुष्य ने प्रगति की है। लेकिन इतना ही समझना पर्याप्त नहीं है।

प्रश्न यह उठेगा कि बुद्धि किस बात पर निर्भर करती है। उसका उत्तर होगा मस्तिष्क पर। मनुष्य का मस्तिष्क बहुत बड़ा है और बहुत अच्छा है। इसीलिए उसकी बुद्धि इतनी विकसित है। लेकिन मनुष्य की बुद्धि इतनी विकसित हुई कैसे ? आदिम वनमानुष के किसी और वंशज का मस्तिष्क तो इतना अच्छा नहीं है—शिंपाजी का नहीं, औरंग ओटांग का भी नहीं। केवल मनुष्य का है। यह भिन्नता क्यों ? क्योंकि मस्तिष्क के साथ हाथों का गहरा संबंध है। मस्तिष्क की प्रगति से हाथों की प्रगति का संबंध है। वनमानुष का पंजा जैसे-जैसे बदलकर मनुष्य के हाथों का रूप लेता गया, उसी प्रकार मनुष्य के सिर में मस्तिष्क की रूप-रेखा भी बदली। मनुष्य का मस्तिष्क आकार में बड़ा और रूप में अच्छा हुआ, उसीके कारण मनुष्य की बुद्धि में इतना जबरदस्त विकास हुआ।

सवेरे के पत्थर

कितने दिन पहले पृथ्वी पर मनुष्य का आविर्भाव हुआ ? लाखों साल पहले। लेकिन इसका सबूत क्या है ? एक प्रकार का चकमक पत्थर।

सन १८७६ में फ्रांस की राजधानी पेरिस में पत्थर के इन टुकड़ों

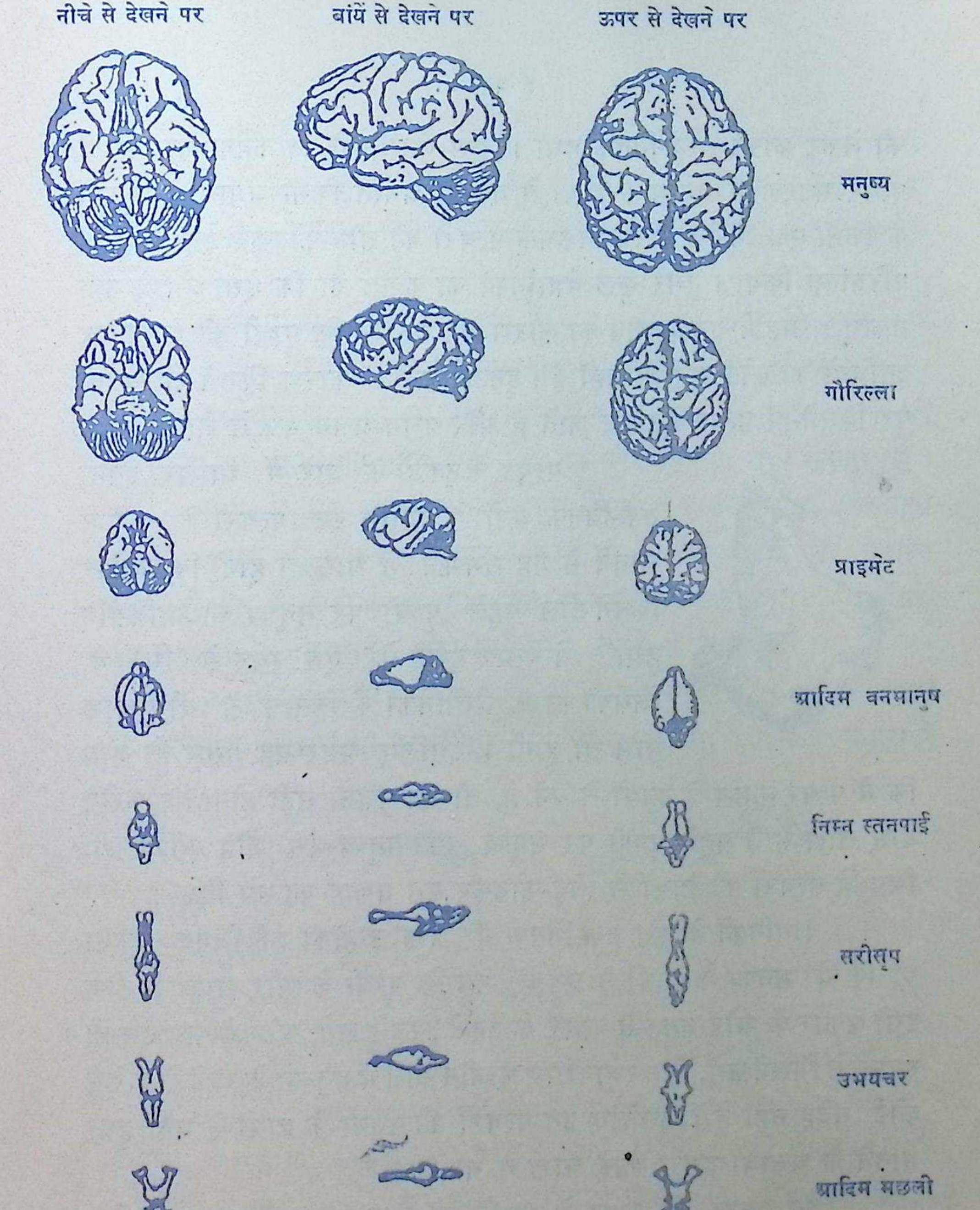
नीचे से देखने पर
बांयें से देखने पर
ऊपर से देखने पर
मनुष्य
गौरिल्ला
प्राइमेट
आदिम वनमानुष
निम्न स्तनपाई
सरीसृप
उभयचर
आदिम मछली

मस्तिष्कों की तुलना

को लेकर काफी तर्क-वितर्क हुआ। कुछ वैज्ञानिकों का कहना था कि ये पत्थर अवश्य ही मनुष्य के हाथों से बने हैं, अर्थात किसी ज़माने में मनुष्यों के किसी एक गिरोह ने इन चकमक पत्थरों को तोड़-फोड़कर इन टुकड़ों में परिवर्तित किया। दूसरे कुछ वैज्ञानिकों का कहना था कि ऐसा हो ही नहीं सकता। उन्होंने इनके बनने का कारण यह बताया कि पृथ्वी की छाती पर आंधियों का कोई अंत ही नहीं है। इन आंधियों के कारण कितने-ही स्थानों पर कितने-ही पत्थर टूट-फूट जाते हैं और अलग-अलग रूप ले लेते हैं।

पत्थर के टुकड़ों के बारे में आखिर इतना तर्क-वितर्क क्यों? क्योंकि इन पत्थरों के बारे में जानने से यह समझने में आसानी होगी कि आखिर कितने साल पहले पृथ्वी पर मनुष्य का आविर्भाव हुआ। ये पत्थर पृथ्वी के ऐसे स्तर से मिले थे, जिसकी उम्र वैज्ञानिकों के हिसाब से बीस लाख साल तो होगी। इसलिए अगर यह सिद्ध हो जाय कि ये पत्थर मनुष्य के हाथों से बने हैं, तो यह कहना सही होगा कि करीब बीस लाख साल पहले पृथ्वी पर मनुष्य या मनुष्य-जैसे जीव मौजूद थे, जिन्होंने पत्थरों को हाथों से तोड़-फोड़कर इस प्रकार का रूप दिया।

वैज्ञानिकों के इस तर्क-वितर्क में जीत उन्हींकी हुई जिनका कहना था कि ये मनुष्य के हाथों से बने हैं, क्योंकि पृथ्वी के और भागों से ठीक इसी प्रकार के और बहुत-से पत्थर के टुकड़े मिलने लगे, और ये सब ऐसे-ही स्थानों से मिलने लगे, जिन स्थानों पर प्राचीन काल में मनुष्यों के रहने के बारे में कोई संदेह नहीं है। इसलिए इन पत्थरों को मनुष्य के हाथों से बना हुआ मानने के अलावा दूसरा कोई चारा न था।

इस प्रकार के पत्थर के टुकड़ों को वैज्ञानिक **इयोलिथ** कहते हैं।

'इयो' का अर्थ है 'सुबह' और 'लिथ' का अर्थ है 'पत्थर'। इसलिए इनको हम सहज भाषा में 'सुबह के पत्थर' कह सकते हैं। इनको यह नाम क्यों दिया गया ? क्योंकि ये पत्थर उस युग का परिचय देते हैं, जब मनुष्य का मनुष्य के रूप का उदय होने ही लगा था।

इतने प्राचीन काल में मनुष्य ने पत्थर को फोड़कर ऐसे टुकड़े क्यों बनाये ? क्योंकि ये मनुष्य के प्रधान सहारे थे, उसके प्रधान हथियार थे।

इस युग की बात को ज़रा समझने की कोशिश की जाय। कहीं भी तब ग्रामों या शहरों का कोई पता नहीं था और हो भी नहीं सकता था। आदिम मनुष्य के झुंड वन-जंगलों में घूमते-फिरते थे। उनके पास ढाल नहीं थी, न तलवार थी, न तीर-कमान। कोई भी हथियार नहीं था, क्योंकि मनुष्य ने उस समय तक हथियार बनाना सीखा ही नहीं था। वह सिर्फ पशु-अवस्था से निकलकर जरा-सा आगे बढ़ने में सफल हो पाया था। इसलिए उस युग में पत्थर के ये टुकड़े ही उसके सहारे थे। इन्हीं पत्थरों की सहायता से उस समय जीवित रहा जा सकता था। कैसे ? मनुष्य ने

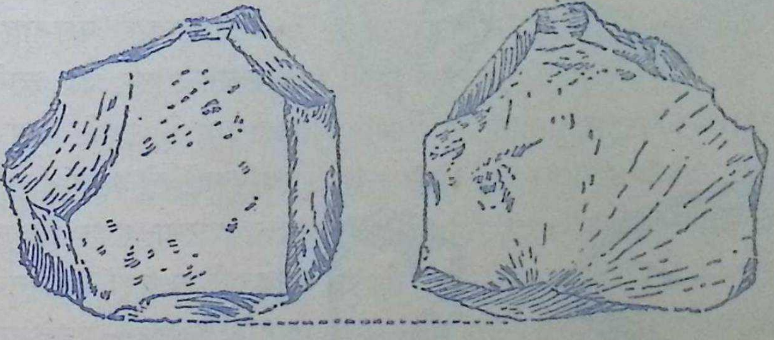

उत्तर भारत में मिले पत्थर के प्राचीन हथियार

चकमक पत्थरों को फोड़कर इस तरह के टुकड़े बनाये। इनको हाथों में लेकर वे पशुओं से लड़े और उन्होंने फल-फूल इकट्ठा करने तथा छोटे-मोटे शिकार

मारने की चेष्टा की।

उस समय मनुष्य बहुत-ही असहाय अवस्था में था। आखिर शेर या हाथी के मुकाबले में मनुष्य की शक्ति कितनी थी? अगर कोई चीज थी तो यही कि उसके पास के दो हाथ थे और उसके सिर में अधिक विकसित मस्तिष्क था। लेकिन वे हाथ और मस्तिष्क भी आज के मनुष्य के हाथों और मस्तिष्क से बहुत निकृष्ट थे। लेकिन फिर भी एक बात थी। पृथ्वी पर और किसी पशु के पास ऐसे हाथ और ऐसा मस्तिष्क नहीं था। अपने इन्हीं हाथों और मस्तिष्क की सहायता से मनुष्य पत्थर फोड़कर हथियार बनाने लगा। ये हथियार हमारे वर्तमान युग के हथियारों की तुलना में कितने-ही हास्यास्पद क्यों न हों, लेकिन पृथ्वी के इतिहास में इन्होंने एक आश्चर्यजनक परिच्छेद का सूत्रपात किया। हथियारों की उन्नति के साथ-साथ मनुष्य भी उन्नति की ओर बढ़ने लगा।

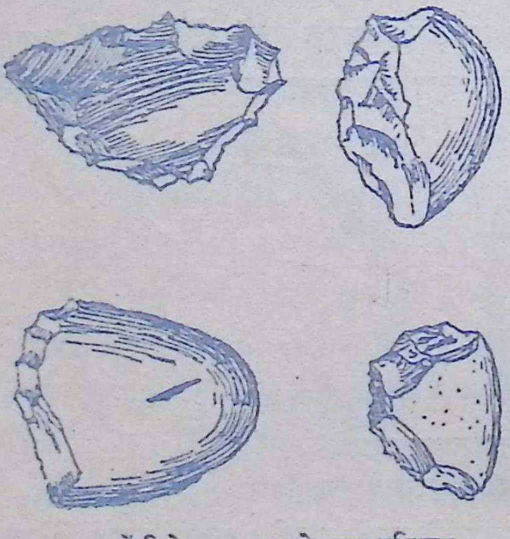

भारत में मिले पत्थर-युग के कुछ हथियार

वास्तव में पशु-अवस्था से निकलकर हम जो इतने आगे बढ़ पाये हैं, इसके लिए हमारे पूर्व-पुरुषों को बहुत-से स्तरों को पार करना पड़ा होगा! इन सुबह के पत्थरों में मनुष्य की प्रगति के सबसे पहले स्तर की कहानी लिखी हुई है। इसीलिए इस प्रकार के पत्थर के टुकड़े मिलने पर वैज्ञानिक और इतिहासकार उनको बड़ी सावधानी के

साथ अजायबघरों में रखते हैं।

पत्थर : कांसा : लोहा

उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में विभिन्न शहरों के विभिन्न अजायबघरों में पृथ्वी के अलग-अलग स्थानों से मिले हुए आदिम मनुष्य के हाथों से बने हथियार जमा होने लगे। लेकिन सारे हथियार एक प्रकार के नहीं थे। कुछ तो बिल्कुल ही कुंद और पत्थर के स्थूल टुकड़ों की तरह थे। कुछ बाकायदा पालिश किये हुए और पैने थे। और पत्थर ही क्यों? ये हथियार तांबे के बने हुए भी थे, लोहे के भी और दूसरी वस्तुओं के भी।

अगर हथियारों की उन्नति के साथ-साथ ही आदिम मनुष्य धीरे-अग्रसर होकर आखिर में सभ्य और उन्नत हुआ है, तो हम हथियारों को एक के बाद दूसरे युग के अनुसार इकट्ठा करके भी रख सकते हैं और इससे प्राचीन मनुष्य का धारावाहिक इतिहास मालूम कर सकते हैं, अर्थात यह, कि किस स्तर के बाद किस स्तर को पार करके मनुष्य सभ्यता के वर्तमान स्तर में आ पहुंचा है। इसलिए समस्या अजायबघरों में जमा हथियारों को एक के बाद दूसरे युग के क्रम के अनुसार सजाकर रखने की है।

इस समस्या का समाधान किया सन १८३६ में जे० पी० टॉमसन नाम के एक वैज्ञानिक ने। डेनमार्क देश के कोपेनहेगन शहर के अजायबघर में प्राचीन हथियारों को युगों के अनुसार श्रेणी-विभक्त करने और उनको ठीक तरह सजाने की समस्या को लेकर श्री टॉमसन बहुत दिनों से व्यस्त थे।

उन्होंने कहा कि आदिम हथियारों को श्रेणी-विभक्त इस बात को देखकर करना होगा कि के वे किस वस्तु के बने हैं। हथियार बनाने की ये वस्तुएं तीन प्रकार की हैं—पहली, पत्थर; दूसरी, तांबा और कांसा, हालांकि इनमें प्रधान कांसा ही है; और तीसरी, लोहा। इन तीन प्रकार की वस्तुओं से बने हथियारों में सबसे पुराने हैं पत्थर के हथियार, उनके बाद आते हैं

तांबे और कांसे के हथियार और उनके बाद लोहे के।

पत्थर के बने हथियार सबसे पुराने क्यों समझे जाते हैं ? क्योंकि पत्थर के टुकड़े से पत्थर को फोड़कर और छीलकर हथियार बनाना सबसे आसान है। इसलिए मनुष्य के लिए सबसे पहले इसी प्रकार के हथियार बनाना संभव हुआ। फिर धीरे-धीरे पत्थर घिस-घिस करके बेहतर और भिन्न-भिन्न प्रकार के हथियार बनाये जाने लगे। पत्थर के मुकाबले में कांसे के हथियार बनाना बहुत कठिन काम है। तांबा और टीन मिलाकर पिघलाने से कांसा बनता है। इसलिए कांसे के हथियार बनाने में अनेक दिक्कतें हैं। सबसे पहले तांबा और टीन इकट्ठा करना ही कठिन है, क्योंकि अधिकतर ये मिट्टी और पत्थर के साथ मिले हुए पाये जाते हैं। इसलिए पहली समस्या है इस प्रकार के मिट्टी-पत्थर को ठीक तरह से पहचानना। दूसरी बात है इस प्रकार के मिट्टी-पत्थर को गलाकर उसमें से तांबा और टीन निकालना और इसके बाद दोनों को मिलाना। तब जाकर कांसे के हथियार बनते हैं। कांसे की जगह लोहे के हथियार बनाना और भी कठिन काम है, क्योंकि लौह-अयस्क (ऐसे पत्थर के टुकड़े जिसमें लोहा मिला हुआ हो) को गलाकर उसमें से लोहा निकालना बहुत-ही कठिन काम है।

इसलिए पहले पत्थर के हथियार, उसके बाद तांबे और कांसे के और उसके बाद लोहे के। इसलिए अगर हम हथियार बनाने के इतिहास से मनुष्य की सभ्यता और प्रगति के इतिहास को समझने की कोशिश करें, तो हमें मनुष्य की प्रगति के इतिहास को तीन युगों में बांटना पड़ेगा :

पहला—पत्थर का युग या **प्रस्तर-युग**

दूसरा—कांसे (और तांबे) का युग या **कांस्य-युग**

तीसरा—लोहे का युग का **लौह-युग**

प्रस्तर-युग का एक ग्राम

इसलिए टॉमसन के विचारों के मुताबिक सबसे पहले पत्थर का युग आया। लेकिन क्या ऐसा कहना ठीक होगा ? क्या कोई युग ऐसा था, जिस वक्त मनुष्य के सारे हथियार सिर्फ़ पत्थर के ही बने होते थे ? फावड़ा और कुल्हाड़ी जैसे हथियार भी क्या पत्थर के बन सकते हैं ? इस बात पर बहुतों को शक था, लेकिन १८५४ में स्वीज़रलैंड में एक ऐसी अनोखी घटना हुई जिससे इसका हमेशा के लिए फैसला हो गया।

वह क्या घटना थी ?

उस साल वहां अनावृष्टि रही। तालाबों का पानी सूखने लगा। इस तरह एक तालाब का पानी सूख जाने से उसके बीच की जमीन दिखाई पड़ने लगी। और उसको देखने के बाद सब लोग अचंभे में पड़ गये। क्यों ? क्योंकि वहां प्राचीन काल के एक गांव के खंडहर दिखाई दिये। साफ़ मालूम होने लगा कि पुराने जमाने में एक पूरा-का-पूरा गांव जमीन में धंस गया था और उसके बाद वहां वह तालाब बन गया। लेकिन कारण कुछ भी हो, गांव के सारे चिह्न अभी ख़तम नहीं हुए थे।

सबसे आश्चर्य की बात यह थी कि यह ग्राम पत्थर के युग का गांव था। सन १८५४ से बहुत पहले पृथ्वी के भिन्न-भिन्न स्थानों से जो पत्थर के बने हथियार ढूंढ़ने से मिले थे, इस गांव में भी उसी तरह के हथियार मिले। वहां लकड़ी के दस्ते लगे पत्थर के कुल्हाड़े मिले, हालांकि लकड़ी के दस्ते इतने दिनों में क्षय होकर करीब-करीब खत्म हो चुके थे। इसके अलावा भी वहां पर सामान रखने के छींके, कपड़े के टुकड़े, अन्न के दाने और बहुत-सी दूसरी चीज़ें नजर आईं।

जिस बात को देखकर वैज्ञानिक सबसे अधिक चकित हुए, वह यह थी कि ग्राम में पत्थर के हथियारों के अलावा और किसी हथियार के निशान

भी नहीं थे। इसका मतलब, वह ग्राम प्रस्तर-युग का ग्राम था और इससे टॉमसन की बात सिद्ध हो गई।

पुराना प्रस्तर-युग और नया प्रस्तर-युग

लेकिन प्रस्तर-युग का होते हुए भी यह बात साफ़ दिखाई देती थी कि एक गांव के तौर पर यह काफ़ी उन्नत ग्राम था। इस गांव के लोग खेती-बारी करना सीख चुके थे, कपड़ा बुनना भी सीख चुके थे और छप्पर डालकर मकान बनाना भी जानते थे।

कुछ पहले हमने 'इयोलिथ' या 'सवेरे के पत्थर' का हाल पढ़ा था। वे सब चकमक पत्थरों को फोड़कर मामूली काम के लायक बनाये गये पत्थर थे। मनुष्य के हथियारों की गिनती में पहले यही थे। ये पत्थर इतने भौंडे तथा तुच्छ हैं कि आज उनको हथियार मानना ही हमारे लिए कठिन है। फिर भी मनुष्य के इतिहास में इनका बड़ा महत्व है। ये आदिम मनुष्य के पशु-अवस्था को पीछे छोड़कर आगे बढ़ने के सबसे पहले निशान हैं।

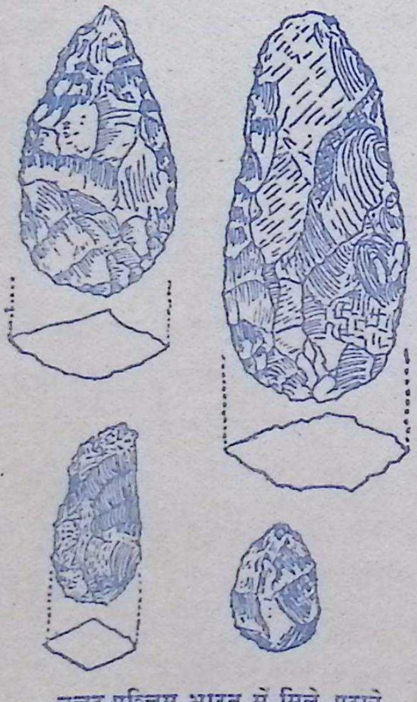
उत्तर-पश्चिम भारत में मिले पुराने प्रस्तर-युग के हथियार

इस प्रकार के हथियारों की मदद से मनुष्य कितना कुछ कर सकता था? इनसे ज्यादा फल-मूल जमा हो सकते थे, खूंख्वार जानवरों से अपने को बचाने की कोशिश करना या छोटे-मोटे जानवरों का शिकार कर लेना भी अब अधिक

संभव हो गया था।

इस अवस्था से शुरू करके खेती-बारी की अवस्था तक पहुंचने में बहुत लंबा अरसा लगा। मनुष्य को इतनी उन्नत अवस्था में पहुंचने के लिए, कि वह खेती-बारी कर सके, लाखों सालों का समय लगा था। इन लाखों वर्षों का इतिहास शुरू से अंत तक प्रस्तर-युग का ही इतिहास है। इतने बड़े युग में हथियार बनाने का एकमात्र सामान सिर्फ़ पत्थर था।

फिर भी चकमक पत्थर के टुकड़ों और लकड़ी के दस्तेवाले कुल्हाड़ों में बहुत अंतर है। ठीक है कि इस सारे युग में हथियार सिर्फ़ पत्थर के ही बनते रहे, लेकिन हथियारों की बनावट में भी बहुत उन्नति हो गई। इसीलिए प्रस्तर-युग के शुरू के हथियारों में और आखिरी काल के हथियारों में जमीन-आसमान का फर्क है। इसलिए पत्थर के युग के इतिहास को भी अलग-अलग भागों में बांटा गया है।

किन-किन हिस्सों में ?

प्रस्तर-युग को आमतौर पर दो भागों में बांटा गया है। वे हैं—**पैलियोलिथिक और नियोलिथिक**। हमने पहले ही बताया है कि 'लिथ' शब्द का अर्थ है 'पत्थर'। 'पैलियो' शब्द का अर्थ है 'पुराना' और 'नियो' का अर्थ है 'नया'। इसलिए 'पैलियोलिथिक' का मतलब हुआ 'पुराना प्रस्तर-युग' और 'नियोलिथिक' का अर्थ है 'नया प्रस्तर-युग'। पुराना युग पहले और नया युग बाद में। पुराना और नया कहकर इनमें फर्क किया जाता है।

पुराना प्रस्तर-युग

इयोलिथ अर्थात सुबह के पत्थर के युग और पुराने प्रस्तर-युग के हथियारों में क्या अंतर है ? इस युग के पत्थरों में एक स्पष्ट रूप देने की कोशिश की गई है। यूरोप, अफरीका और एशिया के बहुत-से देशों में प्रस्तर-युग के हथियार मिले हैं। एक का नाम अंग्रेजी में 'हैंड-एक्स' है, अर्थात

हाथ-कुल्हाड़ा । इस प्रकार के हथियार से काटने, छीलने, हमला करने जैसे बहुत-से काम हो सकते थे। लेकिन उस समय भी एक ही हथियार से बहुत-से काम निकाले जाते थे। अब मनुष्य ने अलग-अलग कामों के लिए अलग-अलग प्रकार के हथियार बनाना सीखा, जैसे मांस छीलने के लिए एक तरह का हथियार, शिकार करने के लिए दूसरे प्रकार का हथियार, इत्यादि। इससे भी आगे चलकर मनुष्य ने बाकायदा बढ़िया तथा विशिष्ट हथियार बनाना

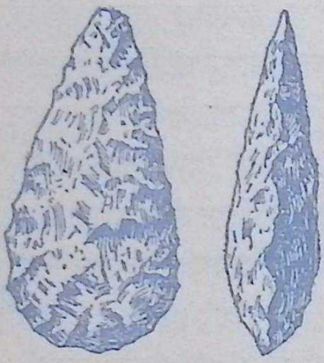

हाथ-कुल्हाड़ा

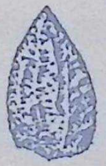

बायें—मांस काटने-छांटने का पत्थर का हथियार
दायें—तिकोना हथियार, इससे शिकार अधिक
आसान हो गया

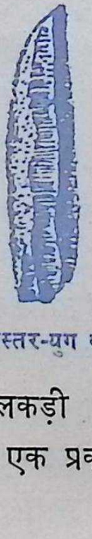

पुराने प्रस्तर-युग की छुरी

सीखा। ये हथियार पत्थर के ही होते थे, लेकिन उनमें लकड़ी या हड्डी या सींग के दस्ते लगाये जाते थे। पत्थर घिस-घिसकर एक प्रकार की छुरी-जैसी चीज़ भी बनाई जाती थी।

नया प्रस्तर-युग

पुराने प्रस्तर-युग के बाद नया प्रस्तर-युग आया। इस युग में हथियार पत्थर के बने होने पर भी इतने उन्नत और अच्छे बनने

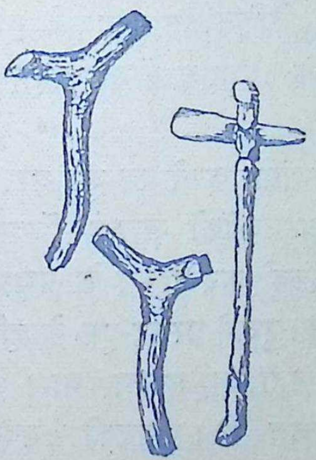

पुराने प्रस्तर-युग के अंतिम काल के हथियार

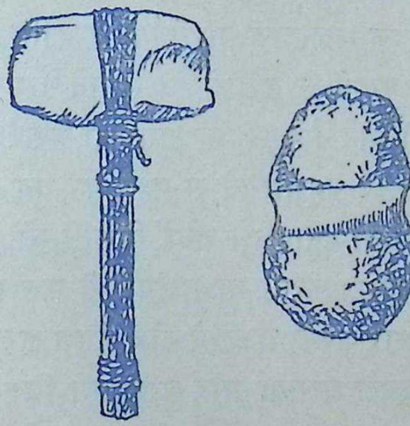

पत्थर का हथौड़ा

लगे कि उनकी वजह से खाद्य इकट्ठा करने के तरीके में मनुष्य के इतिहास

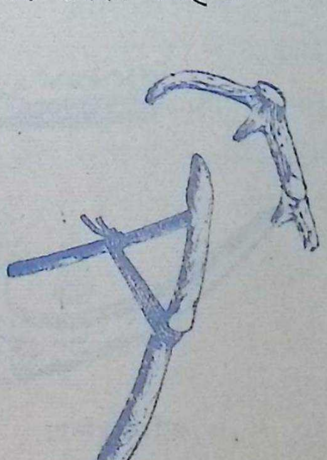

मिट्टी खोदने के हथियार, ये लगभग
४५०० साल पुराने हैं

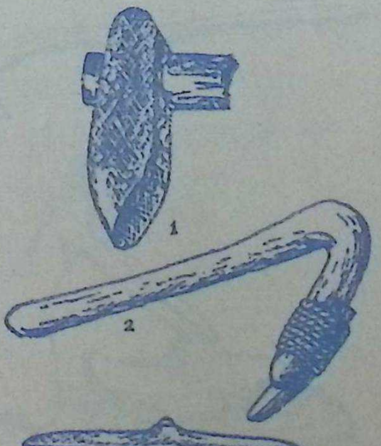

नये प्रस्तर-युग के मिट्टी खोदने के हथियार

में एक जबरदस्त परिवर्तन या क्रांति हुई। लेकिन इस प्रकार के हथियारों को बनाने के तरीकों को सीखने से मनुष्य के इतिहास में यह अद्भुत क्रांति क्यों और कैसे हुई, यह समझना जरूरी है।

यह सीखने से पहले का युग खाद्य-संग्रह करने का युग था। पृथ्वी पर बनी-बनाई जो चीज़ें मिलती थीं, मनुष्य उन्हींको खाकर जिंदा रहने की चेष्टा करता था। जंगल से फल-मूल इकट्ठे करके, वन के पशुओं का शिकार करके वह जीने की कोशिश करता था। पुराने प्रस्तर-युग के हथियारों से इनके अलावा और कुछ काम लिया भी नहीं जा सकता था। लेकिन नये प्रस्तर-युग के हथियार अधिक उन्नत थे। उनकी मदद से मनुष्य ने सबसे पहले अन्न पैदा करना सीखा। अन्न पैदा करने का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि पृथ्वी पर जो वस्तु अपने-आप नहीं बनती है,

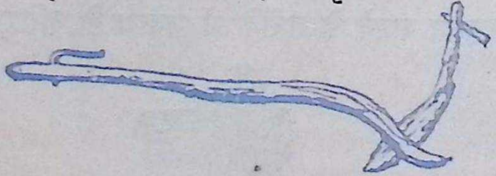

आदिम हंसिया

ऊपर--नये प्रस्तर-युग की कुदाल
नीचे--पिसाई करने के आरंभिक हथियार

या जो वस्तु बनी-बनाई अवस्था में नहीं पाई जाती है, ऐसी चीजें बनाकर तैयार करना और उनकी मदद से अपने को जीवित रखना। जैसे अनाज। अनाज पृथ्वी पर ही होता है, लेकिन अपने-आप नहीं होता। अनाज पैदा करने के लिए मनुष्य को कोशिश करनी पड़ती है, उसका इंत-जाम करना पड़ता है। जंगल काटकर खेत तैयार करना पड़ता है; खेत में हल चलाना पड़ता है; बीज बोना पड़ता है; पानी डालना पड़ता है; देख-भाल करनी पड़ती है—इस तरह के बहुत-से काम करने पड़ते हैं, तब जाकर अनाज पैदा होता है। इसके लिए काम करना पड़ता है। इस प्रकार का काम नये प्रस्तर-युग से ही शुरू होता है। इस नये प्रस्तर-युग में मनुष्य प्रकृति की ओर मुंह बाये, उसकी दया-दृष्टि पर निर्भर होकर जिंदा रहने के लिए मजबूर नहीं रहता, बल्कि अपनी आवश्यकता के अनुसार चीजों को पैदा करना शुरू कर देता है।

और इसी वजह से आखिरकार मनुष्य के लिए यह संभव हो सका कि वह सभ्यता की नींव डाल सके और प्रगति के पथ पर तेजी से बढ़ सके। सभ्यता की कहानी मनुष्य के इतिहास के दूसरे दोनों युगों—कांस्य-युग और लौह-युग—की कहानी से जुड़ी हुई है, लेकिन उसकी चर्चा हम आज नहीं कर सकते, उसके बारे में तुम आगे जाकर पढ़ोगे।

'मंडल' की एक और उपयोगी पुस्तक माला

सुलभ-विज्ञान-माला

हिंदी में ऐसी पुस्तकों का, जो विज्ञान के कठिन विषयों का सुंदर तथा सरल भाषा म बालकों तथा नवसाक्षर प्रौढ़ों को ज्ञान करा सकें, अभाव बहुत दिनों से खटकता रहा है।

विज्ञान के इस युग में वैज्ञानिक जानकारी का ज्ञान कितना आवश्यक है, यह सब जानते हैं। इसी बात को ध्यान में रखकर 'मंडल' ने 'सुलभ-विज्ञान-माला' का प्रकाशन आरंभ किया है। इस माला में अब तक ये पुस्तकें आ चुकी हैं :

१. प्रकाश की बातें

लेखक—ब्रह्मानंद गुप्त : नरेश वेदी

बड़े आकार की ४४ पृष्ठों की इस पुस्तक में प्रकाश अर्थात रोशनी से संबंधित जानकारी दी गई है। जिन बातों की चर्चा की गई है, उनमें से कुछ ये हैं—हम देखते कैसे हैं? प्रकाश चलता कैसे है? प्रकाश की गति क्या है? रंगों का रहस्य, सिनेमा के भेद, फोटोग्राफ़ी आदि-आदि। दर्जनों आसान प्रयोग हैं और अनेकों चित्र। दुरंगी छपाई और तिरंगा आकर्षक आवरण। मूल्य डेढ़ रुपया।

२. ध्वनि की लहरें

लेखक—ब्रह्मानंद गुप्त : नरेश वेदी

हम सनते क्योंकर हैं? आवाज एक जगह से दूसरी जगह कैसे जाती है? संगीत की सुरीली ध्वनियों का क्या रहस्य है? ग्रामोफोन से आवाज कैसे निकलने लगती है?—ध्वनि या आवाज से संबंधित पचासों ऐसी बातें हैं जिनके बारे में सभी जानने की इच्छा रखते हैं। इस पुस्तक में इन सब बातों की बड़ी सुलभ, रोचक तथा सरस भाषा में जानकारी दी गई है। ४४ पृष्ठ, दर्जनों चित्र। सुंदर दुरंगी छपाई, आकर्षक तिरंगा आवरण। मूल्य डेढ़ रुपया।

३. गरमी की कहानी

लेखक—ब्रह्मानंद गुप्त : नरेश वेदी

गरमी हमारे जीवन के लिए इतनी जरूरी है कि इसके बिना एक दिन भी हमारा काम नहीं चल सकता। न जीवन रह सकता है। फिर भी इसके बारे में सामान्य लोग लगभग कुछ भी नहीं जानते। इस पुस्तक में गरमी के रहस्यों पर प्रकाश डाला गया है। ४८ पृष्ठ, अनेकों चित्र। दुरंगी छपाई, सुंदर तिरंगा आवरण। मूल्य डेढ़ रुपया।

४. धरती और आकाश

लेखक—छोटूभाई सुथार

हिंदी में धरती और आकाशीय पिंडों की जानकारी देनेवाली अपने ढंग की अनोखी पुस्तक। ४८ पृष्ठ, अनेकों चित्र। दुरंगी छपाई, तिरंगा आवरण। मूल्य सवा रुपया।

सरल और उपयोगी साहित्य

१. प्रकाश की बातें
२. ध्वनि की लहरें
३. धरती और आकाश
४. गरमी की कहानी
५. पृथ्वी बनो
६. जीव आया
७. मनुष्य जन्मा
८. तीन कुमार
९. हिरन और राजा
१०. बिम्बी की कहानी
११. खूब मिले !

एक रुपया